Shodhaamrit, Vol.-2; Issue-2 (July-Dec.) 2025 : Page No.-291-299

शोधामृत

(कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की अर्धवार्षिक, सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित शोध पत्रिका)

ISSN : 3048-9296 (Online)
3049-2890 (Print)
IIFS Impact Factor-2.0
Vol.-2; issue-2 (July-Dec.) 2025
Page No- 291-299

©2025 Shodhaamrit
https://shodhaamrit.gyanvividha.com

सुजीत कुमार
(नेट-जेआरएफ, शोधछात्र), पीएच-डी0
पंजीकरण सं0- PHD202400002095.
डी. ए-वी. कॉलेज, कानपुर.
संबद्ध -छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर.

Corresponding Author :
सुजीत कुमार
(नेट-जेआरएफ, शोधछात्र), पीएच-डी0
पंजीकरण सं0- PHD202400002095.
डी. ए-वी. कॉलेज, कानपुर.
संबद्ध -छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर.

डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी का हिंदी गद्यचिंतन

शोधसार- आधुनिककाल को गद्यकाल कहा जाता है। पुनर्जागरण का प्रभाव, यातायात के साधनों का विकास, मुद्रणालय का आरंभ, आधुनिक शिक्षा के विस्तार ने साहित्यलेखन में विचारात्मकता व चिंतन को प्रश्रय प्रदान किया। जिसके कारण निबंध, नाटक, कहानी, उपन्यास, समालोचना विधाओं का आगमन हिंदी साहित्य में होता है। आदिकाल, भक्तिकाल, और रीतिकाल तक साहित्य के केंद्र में काव्य था। आधुनिकयुग में गद्य चिंतन व लेखन भी समान महत्व का अभिव्यक्ति माध्यम बन जाता है। जिसे आगे चलकर रामचंद्र शुक्ल, प्रेमचंद, रेणु, हजारीप्रसाद द्विवेदी की प्रशस्त परंपरा सतत प्रवाहमान बनाती है। गद्य विधाओं पर प्रभूत आलोचनात्मक लेखन हुआ है। डॉ0 रामस्वरूप चतुर्वेदी की मान्यता है कि वर्तमान में गद्य की चतुर्मुख प्रधानता है। इसके बावज़ूद गद्य की प्रकृति, गद्य विन्यास व गद्यविधान को समझने का पर्याप्त उपक्रम हिंदी समीक्षा में नहीं हुआ है। इसीलिए डॉ0 रामस्वरूप चतुर्वेदी अपनी अनेक समीक्षाकृतियों में गद्य की सर्जनात्मकता को विवेचन का विषय बनाते हैं। उन्होंने गद्य का उभार, श्रेष्ठ गद्य के मानदंड, विचार गद्य व सृजनात्मक गद्य का प्रसार, गद्य के उपकरण और कविता– गद्य की परस्पर अंतरक्रिया पर सुचिंतित विवेचन किया है। जिससे हिंदी गद्यविधान के समग्र आलोचकीय विश्लेषण का मार्ग प्रशस्त होता है।

बीजशब्द- भाषिक विन्यास, पदसंघटना, प्रातिशाख्य, कल्पसूत्र, उत्कलिकाप्राय, काल्पनिक गद्य, अकाल्पनिक गद्य, गद्यकाव्य, गद्यकविता, वचनिका, वृत्तगंधि गद्य, नयी कविता, रचनात्मक सघनता, स्वत:संपूर्ण गद्य, विचार गद्य, संचार गद्य, विचलन, नाद-सौंदर्य, रचना-संयोजन, रचनात्मक तनाव, अनुभव-प्रक्रिया, अर्थाभिव्यंजना।

शोध विस्तार :-संस्कृत साहित्य में एक रोचक उक्ति है। "गद्य कवीनां निकषं वदन्ति।" अर्थात गद्य कवियों की कसौटी है। जब विद्यार्थी भरपूर अध्ययन के पश्चात परीक्षा में उत्तर लिखने के लिए बैठता है । जहाँ उसे विवरणात्मक पद्धति पर दीर्घ उत्तरीय प्रश्न लिखने होते हैं। वहाँ पर लिखते समय गद्य के वाक्यविन्यास के गठन में अभिव्यक्ति और अनुभूति

के द्वंद्व को सर्वप्रथम अनुभव करता है। उसे प्रतीत होता है कि वह अपनी बात को मनचाहे रूप में व्यक्त नहीं कर पा रहा है। कर्ता-कर्म-क्रिया अथवा परसर्ग सामंजस्य नहीं बरत रहे हैं। वहीं पर गद्य के भाषिक-विन्यास व पदसंघटना के सटीक कौशल की अपेक्षा अनुभव होती है। हालांकि भाषा के सम्यक बर्ताव की समस्या भाषा के परस्पर मौखिक व्यवहार में भी दिखाई पड़ती है। चूँकि परस्पर व्यवहार में भाषा के प्रसंग सीमित अवधि व संदर्भ के लिए होते हैं । जबकि परीक्षार्थी का उत्तर लेखन संदर्भ उससे लंबे व परस्पर संबद्ध होते हैं। वहीं इससे आगे सर्जनात्मक लेखन में विषयवस्तु के वैविध्य व प्रसंगों की परस्पर संबद्धता श्रेष्ठ भाषिक कौशल की अपेक्षा करती है।

सामान्य जनमानस यह मानता है कि कविता साहित्यजगत की रानी है व गद्य उसका अनुचर। काव्य रचना में अक्षम व्यक्ति गद्यलेखन में प्रवृत्त होते हैं, यह अवधारणा भी पाई जाती है। कविता को साहित्यजगत की रानी तथा गद्य को उसके अनुचर के रूप में कतिपय ऊना मानने की सोच भी रही है। कविता को विशिष्ट क्षणों की विशिष्ट अनुभूति के रूप में विश्लेषित किया जाता है जबकि गद्य का व्यवहार सामान्य बोलचाल के लिए होता है।

साहित्य की विभिन्न विधाओं की व्याख्या करते हुए प्रायः: कह दिया जाता है कि पद्य अथवा कविता में भावप्रधान होते हैं। साहित्य के अध्येता इस तथ्य से भलीभाँति अवगत हैं कि गद्य में विचार मुख्य हैं तथा पद्य विशेषकर आधुनिक कविता विचारों के ऊद्वेलन से ही जन्म ले रही हैं। वस्तुत: भाव और विचार विधागत बंधन छोड़कर एक-दूसरे की सीमारेखा का अतिक्रमण करते रहते हैं।

यह भी अवधारणा आधुनिक साहित्यचिंतन प्रस्तुत करता है कि पद्य में भावपूर्ण संवेदनशीलता तथा गद्य में चिंतनपरक संवेदनशीलता का प्राधान्य रहता है। आधुनिक विमर्शमूलक साहित्य पर दृष्टि डालने से यह स्पष्ट हो जाता है कि साहित्य की वर्ण्यवस्तु से तादात्म्य स्थापित करने के लिए साहित्यमात्र के प्रति संवेदनशीलता की अपेक्षा रखनी होगी। न कि संवेदनशीलता को कवितामात्र के ही पक्ष में बद्ध कर देना उचित होगा।

साहित्य की पाठ्यपद्धति प्राचीनकाल से चली आ रही है। प्राचीनतम आर्षग्रंथ वेद गुरु-शिष्य परंपरा में पाठ व गेयरूप की मौखिक परम्परा में पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होते रहे हैं। इसके पूर्व चलकर देखें तो आदिम मानव अपनी आदिम वृत्तियों को मौखिक रूप में व्यवहार करते-करते चित्र लिपि के माध्यम से लेखन का वरण काफी पीछे करता है। पद्य की पाठ्य तथा गेय विधा के बरक्स गद्यलेखन के लिए व्यवस्थित वृत्ति की अपेक्षा रहती है। हम देखते हैं कि हिंदी साहित्य में आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल तक साहित्य सृजन का प्रधान माध्यम पद्य ही रहा है। हालांकि उसका कतिपय संबंध लेखन व लेखन के साधनों की उपलब्धता व जटिलता से है। इसके पश्चात आधुनिककाल में गद्य का विस्फोट होता है। और आचार्य रामचंद्र शुक्ल इसे गद्यकाल नाम देते हैं। आधुनिक काल में गद्य के बहुलता के कारणों का विश्लेषण यहाँ पर विषयांतर होगा। यहाँ पर गद्य में विचारों की भाषिक विन्यास में संविलयन के विषय में डॉ0 रामस्वरूप चतुर्वेदी के मंतव्य को साझा करना अपेक्षित होगा-"संस्कृत में गद्य रचना कवियों के लिए भी कसौटी है तो वहाँ भाव शायद रहा होगा कि चिंतन तो व्यवस्थित गद्य में ही किया जा सकता है। और व्यवस्थित चिंतन कवियों के लिए कठिन कर्म सदैव रहा है, अत: गद्य लिखना कवियोऔ के लिए कसौटी भी है और चुनौती भी। यहाँ इस समूची व्याख्या में यह अंतर्निहित है कि गद्य मुख्यतः बोलने के लिए है, और उसे लिखना अपनी कुछ निजी समस्याएँ खड़ी करना है।"[1]

संस्कृत साहित्य में गद्य का उद्भव यजुर्वेद की संहिताओं से है। 'अनियताक्षरावसानो यजुः' तथा 'गद्यात्मकं यजुः' अर्थात वाक्यों में आनेवाले शब्दों की सीमा जहाँ नहीं होती है, उसे 'यजुस्' कहते हैं। ऋक् तथा साम् पद्यात्मक व यजुस् विशेषतः: कृष्ण यजुर्वेद गद्यात्मक है। ब्राह्मण ग्रंथ, प्रातिशाख्य, कल्पसूत्र (श्रौतसूत्र, गृह्यसूत्र, धर्मसूत्र, और शुल्व सूत्र) निरुक्त, व्याकरण व षड्दर्शन के ग्रंथ गद्यात्मक विधान में हैं। पुराणों का अधिकांश भाग पद्यात्मक व यत्र-तत्र गद्य

भी पाया जाता है। पुराणों का गद्य लौकिक व वैदिक गद्य के मध्य सेतु की भाँति है। इसमें पद्य की भाँति प्रसाद, अलंकार व प्रौढता का सन्निवेश है। गद्यकाल की परंपरा प्रौढ़ावस्था को गुढ़ाढ्य, सुबंधु, दंडी, बाण, अंबिकादत्त व्यास की कृतियों में प्राप्त करती है।

संस्कृत गद्यकाव्य के दो भेद हैं- कथा व आख्यायिका। कथा में नायक अथवा कोई अन्य वक्ता होता है। आख्यायिका में इतिवृत्त के विभाग उच्छवास में बँटे होते हैं। वे वक्त्र-अपवक्त्र छंद में बँधे होते हैं। कथा में कोई विभाग नहीं होता है। आख्यायिका ऐतिहासिक वृत्त होती है जबकि कथा कविकल्पित होती है।

संस्कृत गद्यसाहित्य की प्रधान विशेषता सरलता, रोचकता, स्वाभाविकता, प्रवाहात्मकता, एवं संवादात्मकता है। संस्कृत गद्य की भाषा की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता सामासिकता है। समास की बहुलता ओज का प्राण है और यही ओज गद्य का प्राण है-"ओजः समासभूयस्त्वमेतद् गद्यस्य जीवितम्।" – आचार्य दंडी

गद्य के अवांतर भेदों की सँख्या चार है- मुक्तक, वृत्तगंधि, उत्कलिकाप्राय, चूर्णक। समासरहित गद्यरचना मुक्तक है। गद्य में छंद का अंश आ जाने पर वृत्तगंधि बनती है। लंबे समासों से युक्त गद्यरचना उत्कलिकाप्राय है। अल्प समास युक्त गद्यरचना चूर्णक है। संस्कृत साहित्य में बाण का गद्य सर्वश्रेष्ठ व कादंबरी सर्वश्रेष्ठ रचना मानी जाती है। गद्य को कवियों की कसौटी मानने का कारण स्पष्ट करते हुए रामसिया मिश्र लिखते हैं कि-"गद्यकाव्य को ही कवि की कसौटी इसलिए मानते हैं कि पद्य की भाँति गद्यलेखक निर्धारित नियमों का दास नहीं होता। उसे उस पद्यविशेष के नियत सँख्यावाले अक्षरों तक ही अपने को सीमित करने की गद्य में परतंत्रता नहीं है वह वहाँ सर्वथा स्वतंत्र है।"[2]

गद्य का विभाजन मुख्यतः दो भागों में किया जाता है-(क) काल्पनिक गद्य (ख) अकाल्पनिक गद्य। काल्पनिक गद्यवृत्त के अंतर्गत उपन्यास, कहानी, नाटक व एकांकी को सम्मिलित किया जाता है वहीं अकाल्पनिक गद्यवृत्त में निबंध, जीवनी, आत्मकथा, संस्मरण, रेखाचित्र, यात्रा-संस्मरण, रिपोर्ताज, आलोचना, पत्र, डायरी, इंटरव्यू को रखा जा सकता है। काल्पनिक गद्य में कथा वस्तु का विधान पूर्णतः लेखकीय कल्पना पर आधारित होता है। वहीं अकाल्पनिक गद्यविधान प्रमुखतः वास्तविक संदर्भों पर आधारित होता है। वर्तमान में हिंदी गद्य विधाओं के दोनों रूपों और भाषिक व विषयवस्तुगत दोनों आयामों को भी समेटे हुए हैं।

हिंदी गद्य का विवेचन मुख्यतः इतिहास व आलोचना के ग्रंथों में दिखाई पड़ता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'हिंदी साहित्य का इतिहास ' में आधुनिक युग में गद्यरूपों का उभार देखकर 'गद्यकाल' नाम प्रस्तावित किया है। इतिहासग्रंथों में गद्य का विवेचन विधाओं के उद्भव व विकास तथा गद्यकारों के विवरण के रूप में प्राप्त होता है। आलोचना ग्रंथों में भी गद्य का विवेचन उसकी सामाजिक- सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर ही संकेंद्रित है। हिंदी में गद्य, गद्य की प्रकृति, समूची गद्यविधाओं का समवेत गठन, भाषिकविधान, उपकरण अर्थ संघटना के स्तरों पर विवेचन करने वाली कृतियों का सर्वथा अभाव दिखाई पड़ता है। आलोचक रामस्वरूप चतुर्वेदी साहित्य तथा साहित्यिक रचनाप्रक्रिया की विवेचना करनेवाले अप्रतिम आलोचक हैं। उन्होंने साहित्य के साथ ही साहित्य की रचनाप्रक्रिया के सूक्ष्म विश्लेषण का भी ध्यान रखा है। इस रूप में उनका गद्यविषयक चिंतन स्वतंत्र विवेचन की अपेक्षा रखता है। जिसके आधार पर आगे चलकर गद्यविवेचन की व्यापक परंपरा का आरंभ होता है। उनकी रचनाओं में से गद्यचिंतन पर आधारित रचनाएँ 'भाषा और संवेदना', मध्यकालीन हिंदी काव्यभाषा', गद्य की सत्ता', सर्जन और भाषिक संरचना', काव्यभाषा पर तीन निबंध', 'हिंदी गद्य विन्यास और विकास', 'भाषा और संवेदना' प्रमुख हैं। गद्य चिंतन पर आधारित उनकी स्वतंत्र पुस्तक 'हिंदी गद्य विन्यास और विकास' है। इस पुस्तक की रचना का निजी कारण पुस्तक के आमुख में स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि आलोचक का मन गद्य से कविता और कविता से गद्य की ओर भटकता रहता है। यह आलोचक के लिए कठिन होता है जिसमें किस पक्ष में

खड़ा हो, उसका निर्णय करना कठिन हो जाता है। आलोचक के द्वैत से विलग होकर गद्यविवेचक की अपनी इस संक्षिप्त मगर विस्तृत आयाम को समेटे हुए भूमिका में आने का कारण बताते हुए वे लिखते हैं कि-"गद्य से कविता तथा कविता से गद्य की ओर मन भटकने के निजी कारण के अतिरिक्त उल्लेखनीय यह भी है कि साहित्यचिंताओं में से लेखक के मन में एक बराबर यह रही है कि गद्य की चतुर्मुख प्रधानता के इस युग में गद्य की प्रकृति को समझाने का हमारे यहाँ उपक्रम बहुत कम हुआ है।"[3]

इस तरह रचना का प्रधान कारण गद्य की प्रकृति को समझना-समझाना है। यह प्रक्रिया लेखक की पिछली समीक्षाकृति 'गद्य की सत्ता' (1977) से आरंभ हो चुकी थी। जिसके साहित्येतिहास से जुड़े आयाम' हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास' (1986) से भी प्रकट होते हैं। यह प्रक्रिया व्यापक रूप से पूर्णता 'हिंदी गद्य: विन्यास और विकास' में प्राप्त करती है। यहपुस्तक तीन खंडों में व्यवस्थित है-प्रथम खंड में गद्य की सामान्य प्रकृति, द्वितीय खंड गद्य का विकास, तृतीय खंड गद्यकारों के परिचय पर आधारित है। इस लिहाज़ से प्रथम खंड गद्य की सामान्य प्रकृति के सूक्ष्मातिसूक्ष्म बिंदुओं को समझने के लिए वरेण्य है।

रामचंद्र शुक्ल ने आधुनिक युग में गद्य के उभार को एक प्रमुख घटना के रूप में स्वीकार किया है। वे इसके पीछे विचारात्मकता को प्रधान कारण मानते हैं। रामस्वरूप चतुर्वेदी ने भी गद्य के उभार के दो प्रधान कारण माने हैं- पहला, बाह्यकारक मुद्रण कला का आरंभ है। द्वितीय वास्तविक कारण है-बौद्धिक और विश्लेषणात्मक वृत्ति। छायावादोत्तर काल के बाद इस बौद्धिक वृत्ति की चरम परिणति गद्यकाव्य के उत्थान में मानते हैं। जिसे आचार्य शुक्ल ने अपना प्रिय काव्यरूप कहते हुए 'गद्यकाव्य' नाम दिया था। संस्कृत में इसकी परंपरा को 'वृत्तगंधि गद्य' व प्राचीन राजस्थानी में 'वचनिका' नाम दिया गया है। रामस्वरूप चतुर्वेदी इस प्रक्रिया में गद्य व काव्य का समानुपात खोजने का प्रयत्न करते हैं। वे मानते हैं कि गद्यकाव्य में वर्चस्व कविता का रहता है वहीं 'गद्यकविता' में गद्य मुख्य विधान बना रहता है। गद्य काव्य के नामकरण का इतिहास बताते हुए वे साफ करते हैं कि इसका नामकरण 'नयी कविता' पत्रिका के दूसरे अंक (1955) में प्रस्तावित किया गया था 'गद्यकाव्य' में गद्य और कविता को अलग-अलग पहचाना जा सकता है। 'गद्यकविता' में दोनों का रचनात्मक रूप एकमेक हो जाता है। जिसे वे गद्य की चतुर्मुखी विजय का प्रमाण मानते हैं। इस पूरी प्रक्रिया को गद्य का कविता में रूपांतरण माना जा सकता है। इसकी विकास प्रक्रिया स्पष्ट करते हुए वे लिखते हैं कि –"पद्य, कविता और गद्य की मिलावट के इन उदाहरणों की क्रमिक समीक्षा से स्पष्ट होगा कि धीरे-धीरे गद्य में मिले पद्य के उपकरण हल्के पड़ते जाते हैं। फिर 'गद्यकाव्य' में बाहरी विधान गद्य का है यद्यपि वृत्ति कविता की।"[4]

रामस्वरूप चतुर्वेदी अपनी पुस्तक 'हिंदी गद्य: विन्यास और विकास' के 'विन्यास' शीर्षक अध्याय में श्रेष्ठ गद्य के मानक रूप की व्यापक चर्चा करते हैं। वे मानते हैं कि गद्य का श्रेष्ठ रूप अपने लिए प्रयुक्त होता है, वह किसी अन्य माध्यम के हित में प्रयुक्त नहीं किया जा सकता है। जहाँ कविता संपूर्ण विभावन स्वयं रही है, कविता में कुछ और नहीं लिखा गया, स्वयं कविता ही लिखी जाती रही है। वहीं गद्य उस रूप में न लिखा होकर उपन्यास, कहानी, नाटक, निबंध, समीक्षा आदि के रूप में लिखा गया है-"कविता में अर्थ संकेत ग्रहण से ही नहीं होता। शब्दों की ध्वनि योजना, उनका अघोषत्व, घोषत्व, अल्पप्राणत्व, महाप्राणत्व, आवर्ते, लय-छंद सबकुछ संश्लिष्ट तौरपर अर्थसंपदा को समृद्ध और अनेकार्थी बनाते हैं। इस नाद-विवेचन पर आश्चर्य नहीं होना चाहिए।"[5]

बोलचाल और प्रयोगविधान के स्तर पर गद्य और पद्य में अंतर होता है। बोलचाल के स्तर पर गद्य भाषा का प्रकृत रूप होता है, वहीं पद्य भाषा के बुनने के कौशल की माँग करता है। बोलचाल, पद्य, रचनात्मक गद्य और कविता के बीच की भाषा के बीच रचनात्मक संघनता का अंतर होता है। डॉ0 चतुर्वेदी ऐसे में गद्यकाल के अंतर्गत स्वत: संपूर्ण गद्य की तलाश को रोचक विडंबना मानते हैं।

भाषा की सर्जनात्मक क्षमता स्थिर नहीं होती है। वह सर्वदा वर्द्धमान रहती है। उसमें सहज अप्रस्तुत

विधान की अंतर्क्रिया चलती है। एकनिष्ठता व अर्थवैविध्य की विविध भंगिमा रूपाकार लेती रहती है। मुहावरों में भाषा की भंगिमा व अर्थ एकरेखीय होता चलता है वहीं शब्दशक्तियों अभिधा, लक्षणा, व्यंजना, के सतत प्रयोग से भाषा अपनी सर्जनात्मक अर्थवत्ता का परिष्कार करती चलती है। इस पूरी प्रक्रिया को भाषा के विविध माध्यमों से प्रकट करते हुए रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं कि-"इस दृष्टि से साहित्य रूपों और भाषा स्तरों के तालमेल में क्रम कुछ इसपर प्रकार बनेगा- बोलचाल -लोकसाहित्य-संचारभाषा-विचार साहित्य – अकाल्पनिक गद्यरूप-नाट्य और कथासाहित्य– कविता। यों बोलचाल के स्तर पर भाषा की सर्जनात्मक सघनता सबसे कम है, कविता में सबसे अधिक। कहना होगा कि इस सप्तरंग के एक सिरे पर बोलचाल है तो दूसरे सिरे पर कविता।"[6]

गद्य भाषा का सर्वाधिक काम्य रूप इसी सर्जनात्मक अवस्था की प्राप्ति है। भाषा के इस सीमांत को प्राप्त कर लेने पर गद्य की सत्ता काल्पनिक अथवा अकाल्पनिक गद्यरूपों तक बँधी नहीं रह जाती है। वह आत्मनिर्भरता के प्रतिमान का वरण कर लेती है। इस गद्य में ठोस वर्णन और अनुभव की तरलता का सही अनुपात पाया जाता है। यहाँपर इतिवृत्त व लालित्य के प्रवाह का आग्रह नहीं रह जाता है। डॉ0 चतुर्वेदी गद्यभाषा की इस कसौटी पर एक्सेल मुंदे, विभूति-भूषण बंद्योपाध्याय, महादेवी वर्मा, रामविलास शर्मा, हजारीप्रसाद द्विवेदी, व निर्मल वर्मा के गद्य को सर्वश्रेष्ठ मानदंड मानते हैं। जहाँपर गद्य की विधाएँ छोटी पड़ने लगती हैं व भाषिक सृजनात्मक अर्थवत्ता सर्वोपरि श्रेणी में जा पहुँचती है।

डॉ0 चतुर्वेदी इसी आधार पर अच्छे गद्यलेखन की कमी की शिकायत करते हैं। यहाँपर नाटक, उपन्यास, कहानी, निबंध, आलोचना, होते हुए भी गद्य का अभाव दिखाई पड़ता है। साहित्य का श्रेष्ठ सर्जनात्मक गद्य पीछे है, सब जगह अख़बार का सूचनापरक गद्य छाया हुआ है। वे गद्य का संबंध बोलचाल से मानते हैं यही सिरा वक्तृता से भी संबद्ध है। वह हिंदी गद्य से वक्तृता के श्रेष्ठ मानदंड विनोबा भावे, जयप्रकाश नारायण, राममनोहर लोहिया के वक्तृत्व में मानते हैं। साहित्यिक रचनात्मकता के संदर्भ में महादेवी वर्मा, अज्ञेय, हजारी प्रसाद द्विवेदी के गद्यविधान में पाया जाता है। हिंदी में नीरंध्र गद्य का अभाव दिखाते हुए गद्यकारों की कमियों को भी संकेतित करते हैं-"व्याकरण संबंधी भूले, अधूरे और अव्यवस्थित वाक्य, समरस शब्दावली का अभाव हिंदी गद्य के मौखिक और लिखित दोनों रूपों में ये कमियाँ परिलक्षित की जा सकती हैं।"[7]

हिंदी गद्यकारों में इस अभाव के कारणों की तलाश करते हुए वे लिखते हैं कि खड़ीबोली हिंदी अभी तक हमारे परिवारों में द्वितीयक स्तर पर प्रयुक्त होती है। परिवार में साधारण बोलचाल के लिए जनपदीय बोलियाँ ही प्रयुक्त होती हैं। हिंदी की अठारह बोलियों और परिनिष्ठित हिंदी का यह प्रायोगिक द्वैत शक्ति का स्रोत व असुविधा का कारण एक साथ बनता है। इन बोलियों से रचनात्मक वैविध्य उपजता है तो दूसरी ओर एकरूपता बाधित होकर गद्य के प्रवाह में कमी का कारण बनती है।

एक अंतर्विरोध यह भी द्रष्टव्य है कि मुक्तिबोध, अज्ञेय, नरेश मेहता, तीनों आधुनिक हिंदी गद्य के बड़े लेखक अहिंदी क्षेत्र के रहे हैं। अज्ञेय ने 'आत्मनेपद' में इसे "सीखी हुई भाषा' का उपयोग बताया है। इतर भाषा के आयातित लेखकों द्वारा आयातित संस्कारों के हिंदी में स्वीकार दिखाई पड़ते हैं। वहीं भारतीय भाषा की रैलियों के प्रभाव के हिंदी लेखन में आड़े आने के अनेक कारण डॉ0 चतुर्वेदी मानते हैं। इसका पहला कारण गद्य व कविता के पृथक-पृथक विधान में देखा जा सकता है-"सच पूछिए तो कविता की अपेक्षा गद्य के विधान में यह समस्या अधिक उठती है क्योंकि वाक्य-विन्यास, व्याकरण आदि के जटिल प्रश्न वहीं अधिक आते हैं, जबकि कविता में शब्दचयन का केंद्रीय महत्व रहता है।"[8]

इसका दूसरा कारण वे यह मानते हैं कि परिनिष्ठित हिंदी गद्य के वाक्यविन्यास में वैविध्य का अपेक्षाकृत अभाव है। हिंदी के आरंभिक कथाकार लाला श्रीनिवास दास, प्रेमचंद विषय विन्यास में

अधिक संलग्न रहे, भाषिक रचाव की ओर उनका ध्यान कम गया। बँगला लेखकों के गद्य में यह संतुलन पाया जाता है। प्रेमचंद और जैनेन्द्र के गद्य की तुलना उनके पत्रों के माध्यम से करते हैं। वे कहते हैं कि प्रेमचंद और जैनेन्द्र दोनों की भाषा सरल है। प्रेमचंद की भाषा सहज गंभीर स्वर लिये हुए है वहीं जैनेन्द्र की भाषा शैली की चंचलता व भाषा की भंगिमा से युक्त है। मुंशी प्रेमचंद लिखते हैं कि –"विद्वानों के समाज में जो भाषा बोली जाती है वह बाजार की भाषा से अलग होती है। शिष्ट भाषा की कुछ न कुछ तो मर्यादा होनी चाहिए; लेकिन इतनी नहीं कि उससे भाषा के प्रसार में बांधा आ पड़े।"[9]

हिंदी के गद्यविधान में कभी का तीसरा कारण डॉ0 चतुर्वेदी कुछ संकोच के साथ महावीर प्रसाद द्विवेदी से जुड़ा मानते हैं। द्विवेदी जी के प्रयासों से खड़ीबोली हिंदी के प्रयोग के आरंभिक दौर में भाषा का रूप स्थिर हुआ। यह आरंभिक दौर में नितांत आवश्यकता थी। इसके दोनों पहलू हैं-"हो सकता है कि 'सरस्वती' संपादक ने खड़ी बोली पर आधारित तत्कालीन नयी हिंदी भाषा को एक पहिचान और अस्मिता तो दी, पर उसके आंतरिक विकास की गति को मंद कर दिया। व्याकरण का लाभ रचना की कठिनाई में बदल गया। हिंदी गद्य में प्रतिमानीकरण और नवीकरण की प्रसन्न द्वंद्व प्रक्रिया उस बिंदु से आगे बहुत गतिशील नहीं हो पा रही थी।"[10]

इसका चौथा कारण हिंदी की पढ़ाई से संबंधित है। समाज की यह धारणा है कि भाषा हमारे संस्कार में है, उसके लिए पढ़ने की आवश्यकता नहीं है। पर हम ध्यान नहीं दे पाते हैं कि संस्कारों की बनावट में भाषा का भी योगदान है। इसलिए प्राथमिक शिक्षा में ही भाषा अधिगम की गिरावट को रोकना होगा। हिंदी व्याकरण और रचनाशैली पर अपेक्षित ध्यान देना होगा।

डॉ0 चतुर्वेदी हिंदी गद्य विधान के अभाव का पाँचवाँ कारण अँग्रेजी के सांस्कृतिक आतंक से संबद्ध करके देखते हैं। भाषा का बर्ताव दो रूपों में होता है – व्यक्तित्व रूप में, वह रचनाकार के व्यक्तित्व को गढ़ती है। रचनाकार का व्यक्तित्व भाषिक संस्कारों के माध्यम से सामाजिक-सांस्कृतिक व्यक्तित्व में रूपाकार होकर प्रतिनिधि बन जाता है। वहीं माध्यम के रूप में, भाषा रचनाकार के व्यक्तित्व से विलग कर दी जाती है। भाषा को व्यक्तित्व और प्रयोजन मूलक मान लेने पर भाषा की परिधि सीमित हो जाती हैअँग्रेजी का पक्षधर पक्षधर समुदाय भाषा के माध्यम रूप को दुरभिसंधि के कारण सर्वोपरि रखता है। हिंदी और राष्ट्रीयता का रूप धीरे-धीरे अप्रासंगिक होता जा रहा है। अँग्रेजी का अंतरराष्ट्रीय दबाव व बोलियों का क्षेत्रीय दबाव भारतीय मानस के बनावट पर आतंक के रूप में हावी है।

कविता अनुभव शक्ति का पर्याय है तो गद्य चिंतन शक्ति का। गद्य के ह्रास से हमारा चिंतन पिछड़ता जाएगा। इसलिए आवश्यकता है कि बौद्धिक और सर्जनात्मक स्तर पर गद्य की प्रकृति को सूक्ष्म रूप में गद्य और रचनाकार दोनों की स्वायत्त सत्ता बनाने की है। साहित्य और व्यावहारिक विभिन्न स्तरों पर गद्य के विभिन्न रूप दिखाई पड़ते हैं। गद्य के आविर्भाव काल से ही सर्जनात्मक साहित्य के सीमांत पर गद्य का एक रूप प्रयुक्त होता चला आ रहा है। जिसे डॉ0 चतुर्वेदी 'विचार गद्य' का नाम देते हैं। राजनीति, वित्त, समाज, धर्म, दर्शन, अध्यात्म के विविध पक्ष इसके अंतर्गत समाहित रहे हैं। वर्तमान समय में अध्यापक, रचनाकार, पत्रकार, विधिवेत्ता, राजनेता इसका प्रयोग करते हैं। इसका नया नाम 'विचार साहित्य' दिया गया है। अनेक अनुशासनों की टकराहट से 'विचार गद्य'का बड़ा पुष्ट और अनुशासित रूप विकसित होता है।

हिंदी में 'विचार गद्य' के साथ 'संचार गद्य' भी तेजी से एकाकार हो रहा है। विचार और 'संचार साधनों का गद्य' सर्जनात्मक गद्य को परस्पर विरोधी दिशाओं में खींचता है। डॉ0 चतुर्वेदी लिखते हैं कि –"यों, भाषा के सीमांतों पर एक ओर कविता है तो दूसरी ओर गाली। एक भाषा का सबसे अधिक सघन सर्जनात्मक रूप है तो दूसरा सर्जनात्मक क्षमता से एकदम विहीन ठोस। उनके परे, कविता के पहले मंत्र है तो गाली के बाद हिंसा-दोनों करने के योग्य हैं, कहने के नहीं। रचनाकार को अपने सर्जन में इन दोनों सिरों को कहीं न कहीं संस्पर्श करते रहना पड़ता है। इस माने में गाली

को कविता बना देना सबसे बड़ा रचना -पुरुषार्थ है, जिसका उदाहरण कबीर में कहीं -कहीं देखने को मिल जाता है। गद्यलेखक को इस तुलना में कम विस्तार समेटना है सर्जनात्मक गद्य से लेकर विचार गद्य और संचार गद्य तक।"[11]

अँग्रेजी में 'विचार गद्य 'की व्यापक व समृद्ध परंपरा रही है। वाल्टेयर, रूसो, मिल, ब्रैडले, मैथ्यू अर्नाल्ड, कार्लाइल, मैकाले, डार्विन इत्यादि इसी परंपरा में आते हैं। विक्टोरियन युग में सर्जनात्मक गद्य (नाटक, उपन्यास, कहानी) तथा अकाल्पनिक विचार गद्य (जीवनी – आत्मकथा – निबंध – संस्मरण - साहित्य चिंतन), विचार गद्य (दर्शन, विज्ञान, संस्कृति, मनो-विज्ञान, सौंदर्यशास्त्र, राज्य शास्त्र) में यह केंद्र में है। हिंदी में 'चिंतामणि' व 'अशोक के फूल' में ये सभी गद्यस्तर घुले-मिले दिखाई देते हैं। इसका अलगाव करते हुए डॉ0 रामस्वरुप चतुर्वेदी मानते हैं कि विचार गद्य अर्थ की एकनिष्ठता की कला है, जबकि अकाल्पनिक गद्य हल्की सर्जनात्मक संभावनाओं को लिए रहता हैं संचार गद्य पूर्णतः बोलचाल है। ये तीनों स्तर हिंदी की उपर्युक्त दोनों श्रेष्ठ कृतियों में दिखाई पड़ते हैं।

डॉ0 चतुर्वेदी गद्यविधाओं में से आलोचना का विवेचन करते हुए उसकी मूलप्रक्रिया सर्जनात्मक मानते हैं आलोचना की भाषा अपने आप में कठिन और सुकुमार प्रक्रिया है। अनुभव और अर्थ के संश्लेषण में रचनाकार भाषा के सर्जनात्मक रुप के सहारे व्यक्त करता है उसे समीक्षा अपेक्षाकृत सीधी-सादी भाषा में व्याख्यायित और विश्लेषित करती है। आलोचक शुक्ल की आलोचना भाषा में यह बर्ताव श्रेष्ठ रुप में दिखाई पड़ता है। इसीलिए डॉ0 चतुर्वेदी मानते हैं कि रचना यदि जीवन के अर्थ का विस्तार करती है तो आलोचना रचना के अर्थ का। इस रूप में आलोचना मूल प्रकृति में सर्जनात्मक है।

गद्य के भाषिक उपकरण रचनात्मकता की श्रेष्ठता के निकष हैं। इसमें 'नाद- सौंदर्य' की परख आवश्यक है। आचार्य शुक्ल ने कविता की लंबी आयु का कारक नाद-सौंदर्य को स्वीकार किया है। उपयुक्त शब्द चयन, आरोह-अवरोह का क्रम, और एक साँस में वाक्य पूरा हो जाने की स्थिति में सब नाद- सौंदर्य के आधायक हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल की आलोचना भाषा इन गुणों से समृद्ध है। इसके अतिरिक्त बिंब विधान भी आचार्य शुक्ल की आलोचना भाषा का गुण है।

आधुनिक हिंदी गद्य के उत्प्रेरक उपकरणों में वर्णन और विचार प्रधान हैं। प्रसिद्ध नाटककार इब्सन की मान्यता है कि कविता 'विजन' के लिए है व गद्य विचारों के लिए। वर्णन का प्रयोग निबंध, यात्रा-वृतांत, उपन्यास, कहानी में पाया जाता है, विचार की भूमिका सीमित रहती है। 'विचार गद्य' की ही स्थिति में 'संचार गद्य' लगभग अरचित बोलचाल होता है- "समाचार घटना के सीधे वर्णन का गद्य है, जिसे एक बार पढ़ लेने पर उसका उपयोग पूरा हो जाता है। विचार माननीय गद्य प्रसंग हैं । जिन्हें पढ़ने पर पाठक के मन में पूरी विचार-श्रृंखला बनने लगती है।"[12]

गद्य के प्रयोग और रूप को काल्पनिक गद्य व अकाल्पनिक गद्य विधाओं में पृथक -पृथक करके देखा जा सकता है। सर्जनात्मक गद्य विधाएँ, उपन्यास -कहानी-नाटक कविता के समानांतर कल्पना का उपयोग करते हैं। वहीं अकाल्पनिक गद्य विधाओं में धीरे -धीरे अपनी रचना क्षमता के साथ प्रकट होता है। इन अकाल्पनिक गद्य विधाओं में भाषा सर्जनात्मक गद्य विधाओं के बोझिल गद्य तथा पत्रकारिता के सपाट गद्य के बीच अपनी राह बनाता है। इस अकाल्पनिक गद्य को सूचना के स्तर से ऊपर उठकर रचना तक पहुँचाने में एक कठिन प्रक्रिया का पूर्ण पालन। किया गया है। निबंध, पत्र-डायरी के गद्य से विलग होकर गद्य विधाओं के अस्मितामूलक साहित्य में भाषा विवरण व सपाटबयानी पर आती है, फिर धीरे-धीरे वह अधिक अर्थ-गर्भित उपादानों को अपने में समाहित करने की प्रक्रिया में संलग्न हो चुकी है- "रचनाकार की भाषा का संबंध रचनाकार की जीवन-दृष्टि से होता है। रचनाकार की संवेदनशीलता और समझदारी पर उसकी सामाजिक संवेदनशीलता और समझदारी का गहरा प्रभाव पड़ता है। अंततः: भाषा के प्रति रचनाकार के दायित्वबोध में उसका मानवीय दायित्वबोध व्यक्त होता है।"[13]

सर्जनात्मक गद्य के विविध माध्यमों में गद्यभाषा का रूप अपेक्षाकृत विलग स्थिति में है। वह कविता का प्रतिद्वंद्वी तथा प्रतिपूरक दोनों रूपों में प्रकट होता रहा है। नाटक का रचना संयोजन संवादों पर आधारित होता है। क्रमिक संवाद की श्रृंखला उसे गद्य के बोलचाल की ओर खींचती रहती है। इसीलिए संस्कृत नाटकों के पात्र देवभाषा संस्कृत से लेकर पैशाची-प्राकृत तक का व्यवहार करते हुए दिखते हैं। नाटक और उपन्यास विधा की संरचना का पृथक्करण करते हुए डॉ0 चतुर्वेदी स्पष्ट करते हैं कि नाटक में विविध भाषा स्तरों को एक अनुभव प्रक्रिया में बुना जाता है, जबकि उपन्यास में विविध अनुभव-प्रक्रियाओं को एक भाषा के रूप में। उपन्यास की तुलना में नाटक का गद्य हल्का व संकेतित रहता है। संवादों व रंगनिर्देशों के बीच से सपाटबयानी व अर्थाभिव्यंजना की दूसरी पर्तों को समेटे नाटकीय गद्य के बारे में डॉ0 चतुर्वेदी यह मानते हैं कि यह प्रक्रिया प्रथमदृष्टया आसान दिखते हुए भी कठिन है। जहाँ भाषा का बोलचाल और साहित्य दोनों रूपों का संरक्षण दो प्रधान लक्ष्य लेकर चलता है- संप्रेषण की दृष्टि से सुगमता व तात्का-लिकता व अर्थ की दृष्टि से सघन सर्जनात्मकता।

कथा गद्य की प्रधान समस्या वर्णन और अनुभव के सामंजस्य की है। प्रेमचंद और जैनेन्द्र के उपन्यासों के गद्य की तुलना करते हुए यह स्पष्ट होता है कि गद्य व्याकरण के प्रचलित ढाँचे को मानकर चलने के कारण समतल ज़मीन की तलाश करता है। कविता में छंद का अनुशासन स्वीकार कर लेने पर देशकाल के बंधन से मुक्ति मिल जाती है। नया गद्य भी इस देश-काल के बंधन से मुक्त होने को छटपटा उठता है। इसलिए अब घटना को अनेक स्तरों व कालों में विभाजित करके यथार्थ का बहुल अंकन किया जाता है। गद्यभाषा वर्णन और अनुभव के समंजन का प्रयास करती है। वह वर्णन की रेखानुसारी प्रकृति तथा यथार्थ की बहुस्तरीय प्रकृति के बीच सही अनुपात साधना चाहता है-"प्रभावित करने वाली घटनाओं, व्यक्तियों, रुचियों और दृश्यों में चयन तो 'विजन' का ही कार्य है और विज़न का संबंध 'सामूहिक अवचेतन' से है। चयन-धर्मिता, संदेशोन्मुखी होती है। 'कलावस्तु', 'चयन-धर्मिता', 'कथा-भाषा', और 'काल-चेतना' का घना रिश्ता है।"[14]

वर्तमान में गद्य का प्रसार कविता मे भी हो चुका है। आधुनिक खड़ीबोली कविता की विकास-यात्रा देखकर पता चलता है कि आरंभ से छायावाद तक कविता छंद, तुक, अलंकार की। परिपाटी का पालन करती आ रही है। परवर्ती कविता इससे मुक्त हो चली है। मुक्त छंद के क्रमिक विकास को देखकर पता चलता है कि संस्कृत पद्य की संश्लिष्ट प्रकृति कालांतर में विश्लिष्ट होती है। उसी तरह आधुनिक कविता की भाषा संश्लिष्ट से विश्लिष्ट होती हुई कठोर वर्ण वृत्त व्यवस्था से यांत्रिक व्यवस्था की ओर गमन करती है। जिसे आगे चलकर 'कविता की मुक्ति' को 'मनुष्यों की मुक्ति' के समकक्ष माना लिया गया है- "कविता में जो स्थान लय का है, कहानी में वही स्थान कहानीपन का है। कविता चाहे जिस हद तक छंदमुक्त हो जाय, लेकिन वह लययुक्त नहीं हो सकती। लययुक्त रचना कविता होते हुए भी काव्य नहीं कहलाएगी। कहानीपन से रहित गद्य रचनाओं के बारे में यही बात लागू होती है।"[15]

19वीं सदी के अँग्रेजी साहित्य में भी कविता की पक्षधरता व गद्य के प्रति अनेकविध पूर्वाग्रह दिखता है। मान्यता है कि काव्यरूपों में प्रतिभाजन्य ज्ञान की केंद्रीय स्थिति होती है, वहीं गद्यवृत्त में विवेक की। शमशेर और अज्ञेय की अनेक कविताओं का विधान पूर्णतः गद्य का है। तुक-छंद का सर्वथा अभाव है। परंतु कविता में व्याप्त रचनात्मक तनाव ही वह स्रोत है जो कविता को कविता बनाये रखता है। यह रचनाप्रक्रिया लोकजीवन की पदशैली से होती हुई दर्शन को उघारने तक का उपक्रम करती है- "काव्यभाषा अर्थ की सीमा को बाँधती नहीं है बल्कि 'गिरा अर्थ जल नीति सम' की तरह अर्थ की अनंत छायाओं और संभावनाओं की ओर संकेत करती है, एक अर्थ में वह पाठक को रचना के उस बिंदु पर खींचती है, जहाँ से अर्थ का उत्सर्जन होता है। "[16]

महाकाव्य, खंडकाव्य, गीत, लंबी कविता सभी में भाषिक सर्जनात्मकता व अर्थ संघटना

अपेक्षित होती है। वहीं गद्य में अर्थसघनता के अलग-अलग रूप हैं। पिछली कुछ शताब्दियों के बौद्धिकता के आग्रह, मुद्रण-यंत्रों का आविष्कार व जनतंत्रात्मक भावना ने गद्य की मूल सत्ता को भुलाया है। इधर बीच गद्य के प्रसार के साथ वह मूलस्वरूप पुनः झलकने लगा है। हिंदी गद्य विधान में बढ़ता तत्सम शब्दों का प्रयोग भी इसी का परिणाम माना जाएगा। यह तात्समिकता राजनेताओं के हिंदी को सरल रखने के आग्रह के बावजूद मराठी-बंगाली की तत्समनिष्ठ शब्दावली से अधिक बोधगम्य हो उठती है।

निष्कर्ष : डॉ0 रामस्वरूप चतुर्वेदी हिंदी साहित्य की भाषिक संरचना एवं संवेदनात्मक विकास प्रक्रिया के गहन अध्येता व आलोचक हैं। उनकी इतिहास, आलोचना व रचना-समीक्षा की विभिन्न कृतियों से साहित्य की संवेदनात्मक संरचना व भाषिक बनावट को परखने का प्रयत्न किया गया है। वे साहित्य की दोनों विधाओं गद्य व पद्य की भाषा का विवेचन सूक्ष्म सतहों पर जाकर करते हैं। 'काव्यभाषा पर तीन निबंध' व 'हिंदी गद्य: विन्यास और विकास ' इस विषय की महत्वपूर्ण रचनाएँ हैं। संस्कृत साहित्य में रचनाकार की कसौटी गद्यभाषा के प्रतिमानों पर की जाती है। गद्यविधान, गद्य के भेदों, हिंदी गद्य की रचनाप्रक्रिया, भाषिक संयोजन, हिंदी गद्य का विकास इत्यादि विषयों का विवेचन करते हुए अनेक मौलिक व व्यावहारिक संदर्भों को सुलझाते चलते हैं। जिससे हिंदी गद्य के समस्त उपादानों को समझने में सहायता मिलती है। गद्य को उसकी विधाओं में बाँटकर समझना मात्र ही आलोचना की अपर्याप्त दृष्टि है। वर्तमान में गद्यविधाओं से आगे बढ़कर गद्य के संपूर्ण विन्यास और भाषिक संरचना का अवलोकन ही हिंदी गद्य के अवगाहन की समग्र दृष्टि प्रदान कर सकता है।

संदर्भ सूची :

1. हिंदी गद्य: विन्यास और विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, छठवाँ संस्करण-2021, पृष्ठ -11.
2. कादंबरी कथामुखम्, राम सिया मिश्र, नारायण पब्लिशिंग हाउस, इलाहाबाद, षष्ठ संस्करण-2004, पृष्ठ -19.
3. हिंदी गद्य: विन्यास और विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज छठवाँ संस्करण-2021, आमुख-VII.
4. हिंदी गद्य: विन्यास और विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, छठवाँ संस्करण-2021, पृष्ठ -13.
5. हिंदी आलोचना, विश्वनाथ त्रिपाठी, राजकमल प्रकाशन, इक्कीसवाँ संस्करण- 2018, पृष्ठ -227.
6. हिंदी गद्य: विन्यास और विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, छठवाँ संस्करण- 2021, पृष्ठ -14.
7. हिंदी गद्य: विन्यास और विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, छठवाँ संस्करण- 2021, पृष्ठ -16.
8. हिंदी गद्य: विन्यास और विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, छठवाँ संस्करण- 2021, पृष्ठ -17.
9. कुछ विचार: प्रेमचंद, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद , पुनर्मुद्रण -2018, पृष्ठ -147.
10. हिंदी गद्य:विन्यास और विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, छठवाँ संस्करण-, 2021, पृष्ठ -21.
11. हिंदी गद्य: विन्यास और विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, छठवाँ संस्करण- 2021, पृष्ठ-24.
12. हिंदी गद्य: विन्यास और विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज छठवाँ संस्करण- 2021, पृष्ठ -30.
13. साहित्य और इतिहास दृष्टि, मैनेजर पाण्डेय, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, पेपर बैक सातवाँ संस्करण-2011, पृष्ठ -68.
14. शेखर:एक जीवनी की संरचना, सत्यप्रकाश मिश्र, शेखर: एक जीवनी का महत्व, संपा0-परमानंद श्रीवास्तव, सुमित प्रकाशन, इलाहाबाद तृतीय संस्करण – 2011, पृष्ठ -45.
15. कहानी:नयी कहानी, नामवर सिंह, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, संस्करण- 2021, पृष्ठ -23.
16. काव्यभाषा पर तीन निबंध, रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, तृतीय संवर्धित संस्करण- 2002, पृष्ठ -10.

•